शान्ति मन्दिर द्वारा प्रकाशित यह ई-पत्रिका आप सबको समर्पित है ।

सिद्ध मार्ग

© Shanti Mandir जनवरी २०११, संस्करण- ३

सद्गुरु ने जो बातें हमें बताई हैं उनमें सर्वप्रथम नाम-जप और भगवत् चिन्तन है ताकि हम अपने मन में परिवर्तन ला सकें ।

प्रिय आत्मन, सप्रेम जय गुरुदेव ! प्रस्तुत है सिद्ध मार्ग के तृतीय अंक के अन्तर्गत गुरुदेव महामण्ड्लेश्वर स्वामी नित्यानन्द जी के एक प्रवचन के कुछ सम्पादित अंश । इस अंक की देरी के लिए क्षमा प्रार्थनीय है ।

सिद्धमार्ग ३

देव अनुरागी अन्य अन्य दिनों व्रत करते हैं । हम सोचते हैं कि व्रत करने से वो देवता, वो सद्गुरु हम पर खुश हो जायेगें कि आज हमने खाना नहीं खाया । परन्तु मैं मानता हूँ कि वास्तव में हमारे ऋषि मुनियों ने शरीर को आराम देने के लिये व्रत के दिवस बनाये । परसों ही कोई कह रहा था कि व्रत के दिन व्रत वाला भोजन कुछ ज्यादा ही खाया जाता है क्योंकि मन को यह भ्रम हो जाता है कि मैं दिनभर कुछ खाने वाला नहीं । काजू, बादाम, मिठाई इत्यादि का हम सेवन कर लेते हैं। बाबा जी कहते थे अगले दिन पेट में इतना दर्द हो जाता है क्योंकि अधिक मात्रा में खाया गया । व्रत इत्यादि हम क्यों करते हैं, किस लिये करते हैं, इस पर भी हम विचार करें । जिन सद्गुरु के मार्ग-दर्शन पर हम चलते हैं, वह हमें यह ही कहते हैं कि

मैं और सद्गुरु भिन्न हैं ऐसा कैसे हो सकता है ?

सर्वप्रथम हमें साधना करनी है । जो बातें हमें बताई गई हैं,उनमें सर्वप्रथम नाम जप और भगवत् चिन्तन है ताकि हम अपने मन में परिवर्तन ला सकें । जब तक मन में परिवर्तन नहीं आता तब तक यह सब बाह्य कर्म हैं। इनसे अन्तर में कोई फ़र्क नहीं पड़ता । दिखाने के लिये, हम लोग कह सकते हैं कि हम क्या क्या करते हैं, परन्तु अन्तर में क्या हो रहा है वो तो हम स्वयं ही जानते हैं । हम रोज सुबह गुरुगीता का पाठ करते हैं । उसमें एक श्लोक आता है 'गुरुरेव जगत्सर्वं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम्' कि जो साधक है जो शिष्य है उसके लिये जगत् गुरु से भरा हुआ है । उसके अनुभव में, उसकी दृष्टि में जो कुछ भी है वह सद्गुरु के सिवा और कुछ नहीं है । हम हमेशा कहते रहते हैं, "मेरे तो बाबा जी हैं, मेरे तो बाबा जी हैं " परन्तु जब वास्तव में अन्तर से यह ज्ञान हो जाता है कि 'गुरुरेव जगत्सर्वं' - मेरे जीवन में जो कुछ भी है सब उनकी ही कृपा है - तब यह बताने की आवश्यकता नहीं पड़ती क्योंकि यदि कहता हूँ कि वो मेरे हैं तो उसका मतलब है कि अब भी द्वैत है, कि मैं भिन्न हूँ, वो भिन्न हैं । 'जगत् सर्वं' में हर एक जीव उस जगत् में आ जाता है । 'सर्वं' में सब कुछ आ जाता है, तो मैं और सद्गुरु भिन्न हैं ऐसा कैसे हो सकता है ? हम लोग पाठ तो हर रोज करते हैं और गर्व से कहते भी हैं कि मैं हर रोज पाठ करता हूँ लेकिन पाठ तो टेपरिकॉर्डर भी करता है । उसमें भी आप टेप डाल दो, बटन दबा दो, तो टेप भी कहेगा कि मैं भी रोज गुरुगीता का पाठ करता हूँ । यदि टेप बोल सकता तो वह भी कहता कि मैं गुरुगीता के १८२ श्लोक बोलता हूँ । भेद कुछ है कि नहीं ? वो एक

मशीन है । हमने बनाई है । बिना सोचे-समझे जैसे तोता, 'राधे श्याम, राधे श्याम', करता है वैसे ही वह टेप करता है। परन्तु हम जब पाठ करते हैं तो कोई भिन्नता होनी चाहिये । भिन्नता यह है कि धीरे-धीरे, कुछ अंश में हम उसे समझने का प्रयास करें । साथ ही उसे अपने जीवन के अनुभव में लाएँ। तब हम कह सकते हैं ' गुरुरेव जगत्सर्व्' कि जगत् में जो कुछ भी है उसमें मैं उन्हीं का दर्शन करता हूँ। सब कुछ उन्हीं का स्वरूप है। मैं ऐसा मानता हूँ कि, अपने आप को शामिल कर , जो कुछ भी मेरे सामने आता है, वह उस सद्गुरु का ही स्वरूप है । बाबा जी हमेशा कहते थे कि अपने आप को स्वच्छ रखो, अपनी देखभाल करो । इस शरीर को भी प्यार से रखो क्योंकि इसमें वह परमात्मा स्थित है ।

सर्वप्रथम हमें यह ज्ञान हो कि 'देहो देवालय' कि यह देह, यह शरीर,एक जीवित मन्दिर है ।

हमें अवश्य ही इसकी देखभाल करनी चाहिये क्योंकि यह गुरु का ही स्वरूप है । इसी में गुरु जीवित रूप में रहते हैं । हमारा शास्त्र कहता है 'देहो देवालयः प्रोक्त, जीवो हि केवलः शिवः'। हम कैसे उस भगवान् की पूजा करें? सर्वप्रथम हमें यह ज्ञान हो कि 'देहो देवालय' कि यह देह, यह शरीर, एक जीवित मन्दिर है । जिस मन्दिर में जाकर घन्टा बजाते हैं वो मन्दिर भिन्न है परन्तु यह जीवित मन्दिर है । 'जीवो हि केवलः शिवः' इसके अन्दर जो देव, चैतन्य शक्ति रहती है, जिसके होने के कारण मैं इस देह में हूँ, वो शिव है । वो भगवान का ही, सद्गुरु का ही स्वरूप है । तो इस शरीर को मन्दिर मानते हुए इस देह में वो जीवित परमात्मा रहते हैं ।

'त्यजेत् अज्ञान-निर्मालयः' जैसे हम शाम या सवेरे पुराने फूलों को त्याग देते हैं

सद्गुरु हमें जो मन्त्र देतें हैं उस मन्त्र का हम निरन्तर जप करते-करते, उस शिव की, उस भगवान् की हम नित्य आराधना करें ।

क्योंकि हमें नये फूल चढ़ाने हैं, उसी तरह अभी जो अज्ञान है कि मैं यह शरीर हूँ, मैं फलाँ हूँ, मैं फलाँ हूँ, यह सब हम त्याग दें। फिर इस जीव की, शिव की पूजा कैसे करें ? 'सोऽहम् भावेन पूजयेत्' सद्गुरु हमें जो मन्त्र देतें हैं उस मन्त्र का हम निरन्तर जप करते-करते, उस शिव की, उस भगवान् की हम नित्य आराधना करें । पूजा के लिये हम सुबह जाते हैं,यदि हमारा कोई इष्ट देवता है तो सप्ताह में एक बार जाते हैं या जब समय मिलता है तब जाते हैं, पर यह जो पूजा हमारे सन्तों, शास्त्रों ने बताई है इसे तो हम हर समय, हर घड़ी कर सकते हैं, तभी यह हमारे अनुभव में आयेगा कि 'गुरुरेव जगत्सर्वं' सर्वत्र जो देखता हूँ वह गुरु का ही स्वरूप है। 'ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम्'- हम भगवान के तीन रूप मानते हैं, ब्रह्मा सृष्टि बनाने वाले, विष्णु सृष्टि बनाये रखने वाले, और शिव उस सृष्टि का संहार करने वाले। हमारे जीवन में हम रूप से सृष्टि बनाते हैं, उसको बनाये रखते हैं और फिर उस सृष्टि का हम संहार कर देते हैं । तो कौन है जो सृष्टि बनाता है, सृष्टि बनाये रखता है और उस सृष्टि का संहार करता है ? जब ज्ञान हो जाता है तब समझ आ जाती है कि जो कुछ भी है, वह उस सद्गुरु का ही प्रसाद है । जो आता है, जो रहता है और जो जाता है वह सब उसी का प्रसाद है , उसी की लीला है । ठीक है कहने मात्र के लिये यह सब सुलभ है, विचार करने के लिये भी अच्छी बात है, परन्तु जब कुछ जाता है तब तो हम नाराज होते हैं कि भाई तुमने क्यों ले लिया? अभी तो मैं इसका उपयोग करना चाहता हूँ और तुम इसे ले गये हो । परन्तु वास्तव में जब ज्ञानोदय हो जाता

हमारा अहम् जीवित सन्त के दर्शन करने से भयभीत रहता है कि अगर मैं उस सन्त के सान्निध्य में रहूँगा, तो यह मेरा छोटा पन कहीं डूब गया तो ?

है, यह भ्रान्ति मिट जाती है कि कुछ आया है या कुछ गया है। क्योंकि हम अज्ञान की सीमित दृष्टि से सब कुछ देखते हैं, समझते हैं तो यह भासता है, कि कुछ आया है कुछ गया है । परन्तु विज्ञान भी यह कहता है कि यह एक अनोखा खेल है । वह एक स्वरूप ले लेता है फिर कुछ कारणों से कुछ और रूप ले लेता है । उसी चीज का आज एक स्वरूप में दर्शन होता है, कुछ समय बाद उसका स्वरूप बदल जाता है और फिर उसे जहाँ जाना होता है वह वहाँ चला जाता है । जब हम किसी स्तोत्र का पाठ करते हैं, धीरे- धीरे उसके भिन्न-भिन्न श्लोकों में से कुछ हमारी समझ में आते हैं, कुछ नहीं भी आते। परन्तु जो समझ में आता है उसे हम और गहराई से समझें। समझ कर उसे हम अपने जीवन में लागू करें। हम विचार करें कि सद्गुरु से हमें प्राप्त क्या करना है ? प्रायः मैनें देखा है कि जब तक सन्त शारीरिक रूप में जीवित रहते हैं, तो लोग सोचते हैं कि जाऊँगा, जाऊँगा । अभी तो वे हैं क्योंकि एक भ्रान्ति भी होती है कि सन्त तो हमेशा के लिये हैं। परन्तु शारीरिक रूप में जैसे हम अपना प्रारब्ध कर्म लेकर आते हैं, वे भी अपना प्रारब्ध कर्म लेकर आते हैं । उनके जाने के बाद लाखों की संख्या में लोग जाने लगते हैं। इसका कारण मैं यह मानता हूँ कि हमारा अहम् जीवित सन्त के दर्शन करने से भयभीत रहता है क्योंकि कुछ अंश में वह अहम् इस बात से डरता है कि अगर मैं उस सन्त के सान्निध्य में रहूँगा, तो यह मेरा छोटा पन कहीं डूब गया तो ? जैसे कुछ लोग दूर से ही समुद्र को देखते है क्योंकि भय होता है कि कहीं लहर मुझे खींचकर न ले जाए ।जैसे समुद्र की

जैसे समुद्र की लहरें आगे पीछे होती रहती हैं वैसे ही सन्तों के सान्निध्य में उनकी कृपा की लहरें बहती रहती हैं ।

लहरें आगे पीछे होती रहती हैं वैसे ही सन्तों के सान्निध्य में उनकी कृपा की लहरें बहती रहती हैं । जब मनुष्य अपने आप को उनमें छोड़ देता है तो लहर उसको उठा कर ले जाती है । उस लहर में अपने आप को छोड़ना, अपने आप को उसमें शरणागत करना यह तो हमारा कर्तव्य है - अगर हमारी इच्छा है तो । बाबाजी एक कहानी कहा करते थे। महाराष्ट्र में एक नाना औलिया नाम के सन्त हुए। औलिया यानि अवधूत जैसे हमारे भगवान् नित्यानन्द थे। अपनी स्थिति में ही मस्त, न किसी से लेना न देना, अपने आप में ही मगन रहना । पुराने समय में ऐसे अवधूत कई हुए । आज कल भी यहाँ वहाँ कहीं कहीं मिलते हैं । उस समय में गाड़ियाँ भी कम हुआ करती थी , लोगों की संख्या भी कम थी । वे अवधूत भी यहाँ वहाँ पड़े रहते थे । एक बार नाना औलिया रास्ते के बीच में लेटे हुए थे । उस समय सन्तों की बहुत मान्यता थी। लोग उनको बहुत मानते थे । वहाँ से उस गाँव का कलैक्टर अपनी घोड़ा-गाड़ी में गुजर रहा था । उसने उनके आगे लाकर अपनी गाड़ी रोक दी और कहा कि, साहब अब मैं आगे नहीं जा सकता। कलैक्टर ने कहा कि जाओ उससे कहो कि उठ जा । तांगे वाले ने कहा कि 'साहब! मैं तो उनको जाकर नहीं कहूँगा, आप ही जाइए, आप ही कहिए। नहीं तो जब तक वह यहाँ पड़े रहेंगे हम यहाँ बैठे रहेगें । या तो मैं अपना तांगा फिरा लेता हूँ।' वह था कलैक्टर, उस गाँव का, उस राज्य का सबसे बड़ा आदमी । उसने सोचा कि, ऐसा कैसे हो सकता है कि मेरे रास्ते में कोई पड़ा रहे। सत्ता का ऐसा अहम् हो जाता है कि

सत्ता का ऐसा अहम् हो जाता है कि व्यक्ति सत्य असत्य को भूल जाता है और कहता है कि मैं कुछ भी कर सकता हूँ।

व्यक्ति सत्य असत्य को भूल जाता है और कहता है कि मैं कुछ भी कर सकता हूँ। उसने सोचा, चलो गरीब आदमी है। इस को पता नहीं। मैं इसे बता दूँ कि मैं कलैक्टर हूँ इस प्रान्त का। जब वह गया और उसने उनसे कहा कि आप यहाँ से जरा उठिये, मुझे कहीं जाना है तो उन औलिया ने ऐसे ही अपनी मस्त स्थिति में अपना हाथ उठाकर जोर से उसको एक लगा दी। अब देखने वाले को लगेगा कि क्या सन्त हैं कि कोई उनको जाकर कहता है कि रास्ते से हट जाओ ओर उन्होंने उसे एक लगा दी। परन्तु हुआ क्या? कलैक्टर जाकर अपनी घोड़ा गाड़ी में बैठ गया और उसने कहा कि ऑफ़िस चलो। ऑफ़िस लौट कर उसने अपना इस्तीफ़ा दे दिया, और जाकर उनके पास बैठ गया। लहर की जो मैं बात कर रहा था, उसके उदाहरण के लिये मैं यह कहानी कह रहा हूँ कि उसका कुछ कर्म, उसका समय ऐसा उदय हो गया था कि वह सन्त, वह औलिया उस रास्ते में लेट गये और उसको ऐसा लगा कि मैं जाकर उनसे कहूँ कि उठ जा परन्तु उनका जो झापड़ पड़ा,तो हमारे शब्दों में शक्तिपात, सद्गुरु की कृपा दृष्टि हो गई। हालांकि ऐसा कम होता है चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नही, क्योंकि सबका हृदय इतना खुला, सबका समय ऐसा, कम होता है। परन्तु होता है। और हम सब इन बातों को सुने है, पढ़े हैं , और जानते है कि जब हम अपने आप को उस लहर की शरण में छोड़ देते हैं, वास्तव में यह मान लेते है कि गुरुरेव जगत्सर्वं कि जो कुछ है उनकी ही कृपा है, जो कुछ भी है उसके ही कारण हैं, जो कुछ मेरे जीवन में होता हैं उसकी ही

लीला है, उसका ही प्रसाद है, ऐसा समझकर जब हम जीते हैं फिर जीवन में कोई दुख नहीं, कोई कष्ट नहीं क्योंकि सब कुछ सम दृष्टि से स्वीकार लेते हैं। परन्तु उसके लिये हमारी समझ, हमारी अवस्था भी ऐसी होनी चाहिये । गुरुगीता में ही दूसरा एक श्लोक आता है "ज्ञानं विज्ञान सहितं लभ्यते गुरुभक्तितः।" हम सद्गुरु से प्रार्थना करते हैं कि मुझे ज्ञान और विज्ञान दोनों के साथ, गुरु भक्ति प्राप्त हो । क्योंकि अगर हम सद्गुरु क्या है, यह जानना चाहते हैं, समझना चाहते है तो इसके लिए भक्ति होनी चाहिये । भक्ति के बिना हम उसको समझ नहीं सकते, भक्ति के बिना तो हमें एक शरीर दिखता है । एक मनुष्य जो अपना कर्तव्य निभा रहा है जैसे हम अपना कर्तव्य निभा रहें हैं । सबसे पहले यह समझ हो कि भक्ति क्या है ? सद्गुरु क्या है ? सद्गुरु के प्रति भक्ति क्या है इसका ज्ञान हमें हो और वह ज्ञान हमारे अन्तर में जीवित हो । यह नहीं कि कुछ भी कर दिया कहीं भी पड़ गये और उसे भक्ति का नाम दे दिया । एक समय कुछ कहें दूसरा कुछ करें । दूसरे समय में दूसरा कुछ कहें और कुछ करें । निरन्तर हमारे जीवन में हमारा कर्म एक जैसा ही हो, हमारा विचार एक जैसा ही हो, जो कुछ बोला है वैसा ही हो, तब हमारी भक्ति निरन्तर ही बनी रहेगी । ऐसा नहीं कि जब सब कुछ ठीक चलता है तो हम सोचते हैं कि मेरा कर्म ऐसा है और जब गड़बड़ होती है तब हम कहते हैं कि भगवन् तुमने मुझ पर से कृपा दृष्टि हटा ली । जब ऐसा विचार हम करते हैं तब हमें कहना होगा कि ना हमारे पास ज्ञान विज्ञान है ना हमारे पास गुरु भक्ति है । सब कुछ नाम मात्र के लिये है । दूसरी

अगर हम सद्गुरु क्या है, यह जानना चाहते हैं, तो इस के लिए भक्ति होनी चाहिए ।

सन्त अपने आप में मस्त जानते हैं कि बाहर यह सब राजनीतिक लीला है ।

एक कहानी याद आती है । एक सन्त जी, किसी एक गाँव से गुजर रहे थे तो लोगों ने बड़ी फूल मालाओं से सत्कार किया । सन्त थे, बोले "वाह! वाह! प्रभु क्या तेरी लीला ।" क्योंकि सन्तो को तो परवाह नहीं कि तुम सत्कार करो या नहीं करो उनको कुछ मानो नहीं मानो । वे मस्त हैं, उनको क्या लेना देना । हमें फ़र्क पड़ता है कि समाज हमें कहे कि हां बहुत अच्छा आदमी है , यह करता है , यह करती है , ये है वो है । वे अपने आप में मस्त जानते हैं कि बाहर यह सब राजनीतिक लीला है । सन्त तो घूमते रहते हैं, फिर वह कहीं और चले गये । वहां कुछ मूर्ख अज्ञानी लोग थे । उन्होंने पत्थर उठा कर मारा और कहा , चल भाग ! यहाँ कहां आया है ? तो सन्त हँसने लगे और बोले हे प्रभु कभी तू फूलों से सत्कार करता है कभी पत्थरों से। हम होते तो उन्हीं पत्थरों को उठाकर वापस उनको मार सकते थे । फूल माला हम प्रेम से स्वीकार कर लेते हैं कि बहुत अच्छी बात है पर पत्थर उठा कर हम उनको ही मार देते हैं । परन्तु सन्त दोनों को स्वीकारते हैं, पुष्पों कि माला को भी , पत्थरों को भी , क्योंकि उनकी दृष्टि में दोनों सम हैं । उन्होंने जान लिया है कि "गुरुरेव जगत्सर्वं" जो कुछ भी है सब सद्गुरु का ही, परमात्मा का ही प्रसाद है । उनकें अन्तर में भक्ति जो भरी है , भक्ति यानि प्रेम । अभी हमने भगवत नाम संकीर्तन किया और जैसे हम करते गये, करते गये, करते गये, मन की बातों को हम भूलते गये । और कुछ समय के लिये हमने अपने आप को , अपने अन्तर में जो आनन्द है, जो भाव है उसमें खो दिया । हम अपने आप में ही मस्त होते गये, भले ही केवल

शास्त्र कहता है कि ३१,६०० बार हम श्वास अन्दर और बाहर करते हैं । ३१,६०० बार मंत्र जप कर सकते हैं ।

आधे घन्टे के लिये ही वह अनुभव हुआ। हम विचार कर सकते हैं कि सन्त जन हमेशा ही उस अवस्था में रहते हैं । भगवन नाम लेते हुये जो अनुभव हमने कुछ समय के लिये किया, अपने आप में पाया, उनकी यह अवस्था हमेशा ही बनी रहती है । क्यों ? वे यह सोचते हैं,"देहो देवालयः प्रोक्तः" यह जो देह है यह एक मन्दिर है । अन्तर में स्थित अज्ञान को उन्होंने त्याग दिया है और हर श्वास के साथ अपना गुरु मंत्र जपते हुए उस देवता की, उस भगवान् की पूजा करते हैं । शास्त्र कहता है कि ३१,६०० बार हम श्वास अन्दर और बाहर करते हैं । ३१,६०० बार मंत्र जप कर सकते हैं । खैर आप कहोगे समय कहाँ है? मैं इतना व्यस्त हूँ, बच्चे हैं ,पति है, पत्नी है , ये हैं वो हैं। मैं तो एक माला कर देता हूँ , आगे भगवान जाने। अगर हम सोचते हैं कि हमें एक घर चलाना है तो हम उस परमात्मा का सोचें , वो कितने घरों को चलाता है और सिर्फ़ मनुष्य योनि ही नहीं, सुबह सूर्य उदय से अगले दिन सूर्य उदय तक, हर एक जगह सम्पूर्ण सृष्टि की वह देख भाल करता है । तो हम विचार करें मैं अपने आप को सत्संगी मानता हूँ , तो सत्संगी क्या? वह सत्संग जो निश्चित निर्धारित समय के लिये है या मेरा जीवन सतत ही सत्संग है तो यह भी निर्धारित कर लें कि कई जीवनों तक मैं सत्संग में जाया करूँगा । जब उस कलैक्टर के उपर उस सद्गुरु की कृपा हुई तो जो कुछ भी उसके सत्कर्म थे उनके कारण उसने निश्चय कर लिया कि जीवन में अब और कुछ नही करना केवल उनकी शरण में जाकर जो कुछ भी पाना है उसे पा लेना है ।

सद- वैद्य के बिना जन्म-मरण के चक्कर से बचने का कोई और उपाय नहीं ।

तुकाराम महाराज कहते हैं कि संसार सागर का जो जन्म मरण का चक्कर है अगर हम इससे बचना चाहते हैं, इससे छूटना चाहते हैं तो सद्-वैद्य के बिना, इस उपाय के बिना और कोई मार्ग नहीं । "धरावे पाय आधि आधि," जो उनके चरण है उनको तुम पकड़ लो यानि जिस बात पर वो दृढ़ होकर खड़े हैं, जिस पर उनकी निष्ठा है , उस बात को तुम भी अपने जीवन में दृढ़ कर लो । लोग यह समझते हैं कि चरण पकड़ना यानि गुरु चलता हो तो उसके चरण को तुम पकड़ लो । भई गुरु गिर जायेगा, उसकी तो चिंता नहीं, हमने तो चरण पकड लिये हैं। परन्तु हम उनके चरण, उनकी पादुका का विचार करें कि अपने जीवन में हम किस पर खड़े रहते हैं, जिसके रहने के कारण यह शरीर खड़ा होता है सद्गुरु किस पर खड़े हैं? जो उनका ज्ञान विज्ञान है, जो उनकी आन्तरिक समझ है उस पर वो खड़े हैं। तो जब शास्त्र हमेशा कहता है कि सद्गुरु चरणों को पकड़ लो तो वह उनके शारीरिक चरण नहीं अपितु जो उनका दृढ़ अनुभव है, दृढ निष्ठा है उसको हम पकड़ें, उसको हम समझें, और उसमें ही हम अपनी निष्ठा को बनाये रखें । सन्त के जीवन में जो कुछ भी घटता है उसे भगवान का प्रसाद समझ कर जीते हैं, स्वीकारते हैं । तो वैसे ही हम भी सब कुछ उसका ही प्रसाद समझें । कभी-कभी सोचते हैं कि क्या मैं यह अपने आप नहीं कर

अज्ञान तो गुरु के माध्यम से ही दूर होगा ।

सकता? अक्सर हम विचार करें, जीवन में हम कुछ भी करते हैं तो किसी न किसी से सीखते हैं । आज-कल सीखने का माध्यम टी.वी. हुआ । किसी न किसी रूप में हम उनसे ज्ञान को ग्रहण करते हैं । उपनिषद् में आता है " मातृ देवो भवः, आचार्य देवो भवः, अतिथि देवो भवः" । सो सर्व प्रथम बच्चा अपनी माता से शिक्षा लेता है, समझता है । माता उसको समझाती है फिर पिता से कुछ ज्ञान पाता है । फिर जब समय आता है तो किसी गुरु के पास माता-पिता ले जाते हैं जिससे वह आध्यात्मिक ज्ञान पाता है । फिर अन्य-अन्य लोगों से वह ज्ञान पाता है । इस लिये शास्त्र कहता है कि इन सबको ही हम देव का स्वरूप, भगवान का ही स्वरूप मानकर पूजते हैं । और उनका सत्कार भी हम ऐसा ही करें कि यह भगवान् के ही नाना स्वरुप हैं जिन सबसे हमें ज्ञान मिलता है । महाराष्ट्र में एक सन्त हो गये जिनका नाम है नामदेव और वो हमेशा ही भगवान् के साथ रहते थे । उस समय महाराष्ट्र में कई बड़े बड़े सन्त थे । नामदेव ने सोचा कि और सबने तो गुरु किया है, मेरे पास तो भगवान् हैं तो मुझे तो गुरु करने की आवश्यकता नहीं । तो भगवान् ने भी सोचा कि नामदेव को समझाना पड़ेगा कि तू मेरे साथ तो रहता है परन्तु तेरा अज्ञान तो गुरु के माध्यम से ही दूर होगा । किसी को सीधे - सीधे बात बताने से वह मानता नहीं, उसे उल्टे सीधे रास्ते से समझाना पड़ता है, तब वह सीख लेता है । जैसे आज कल कॉन्फ्रेन्स होती है वैसे ही

सब भगवत अनुभव में पके हुए हैं कि कोई कच्चा भी है ।

भगवान् ने सन्तों की बुद्धि में डाल दिया कि आप लोग एक जगह एकत्रित हो जाओ । तो उस समय के सब सन्त जन एक जगह एकत्रित हो गये । भगवान् बोले, वो देखो एक जगह सब लोग एकत्रित हो रहें हैं, तुम भी जाओ । नामदेव ने कहा, भगवान् क्या जरूरत है ? मै तो आप के साथ हूँ, मै वहाँ क्यों जाऊँ? भगवान ने कहा, नहीं तुम भी जाकर देखो क्या बताते हैं ? क्या चर्चा होती है ? तुम भी उनको बताओ समझाओ । वह सन्त गृहस्थ थे या अकेले में रहते थे । कोई कुम्हार था. कोई नौकरी करता था । तुकाराम महाराज व्यापार करते थे । ऐसे ही सब सन्त कुछ न कुछ करते थे । तो जब सब एक साथ वहाँ बैठे तो नामदेव भी वहां आ गये ।

गोरा कुम्भार नाम का एक सन्त था जो कुम्हार था - मटके बनाया करता था। तो उससे कहा कि भाई तुम जरा सबके माथे को ठोक कर देखो कि सब पके हुए हैं कि कोई कच्चा भी है । सब भगवत अनुभव में पके हुए हैं कि कोई कच्चा भी है । गोरा कुम्हार सबको ठोक कर सबको पास करते गए, करते गए, करते गए। जब नामदेव के पास गए तो बोले, ये तो कच्चा है । नामदेव एकदम क्रोधित हो गये, कि कैसे मूर्ख हो तुम लोग । मैं तो हमेशा ही भगवान् के पास रहता हूँ। तुम लोग तो अपने भगवान् की चर्चा करते हो, सुनते हो,

जो क्रोधित हुआ वह कहां पका हुआ है जिसका यह अहम है कि मैं तो परमात्मा के पास रहता हूँ, तुम लोग तो अलग हो ?

पढ़ते हो, मैं तो हमेशा उनके साथ ही रहता हूँ। अब सबसे पहले हम विचार करें कि जो क्रोधित हुआ वह कहां पका हुआ है जिसका यह अहम है कि मैं तो परमात्मा के पास रहता हूँ, तुम लोग तो अलग हो ? तो क्रोधित होकर वह उठकर चले गये कि इन मूर्खों के साथ क्या बैठना। वहाँ से वह भगवान् के पास चले गये । और कहा कि भगवान् तुम ने कहा तो मैं वहां चला गया पर उन्होंने तो सब गड़बड़ कर दिया । भगवान् ने पूछा तो नामदेव ने कह दिया उन्होंने कहा कि ये तो कच्चा है । भगवान् ने कहा देख नामदेव बात तो ठीक है । जो उन्होने कहा है तब है तो कच्चा । तू रहता है मेरे पास तुझे समझ कुछ आई नहीं ।

नहीं। तुझे किसी गुरु के पास जाना पड़ेगा । वह तुझे पका देगें । फिर तू भी पक जायेगा जैसे वे पके हुये हैं । नामदेव ने सोचा भई इस बात को जल्दी मिटा दिया जाये कि पका हूँ, कच्चा हूँ, ये हूँ, वो हूँ क्योंकि छोटा सा समाज है उसमें बात फैल जायेगी कि नामदेव कच्चा है, बाकी सब पके हुये हैं । तो उन्होंने कहा कहां जाऊँ ? तो भगवान् ने कहा उस गाँव में एक शिव मन्दिर है, वहां एक महात्मा रहते हैं । तू उनके पास जा । जब नामदेव मन्दिर पहुँचे तो देखा कि महात्मा जमीन पर लेटे हुये हैं और पाँव शिवलिंग पर रखे हुये है । नामदेव ने कहा महात्मा जी मुझे भगवान् ने आपके पास भेजा है । पर इससे पहले कि मैं आपको अपनी बात बताऊँ, मैं आपसे पूछना चाहता हूँ कि आपने अपने पाँव शिवलिंग पर क्यों रखे हैं ?

श्रेष्ठ लोग जैसा अपना जीवन बिताते हैं, मनुष्य वैसा ही आचरण करता है ।

आप जो अपराध कर रहे हैं पहले उसे ठीक कीजिये फिर मैं आपको अपनी बात बताऊँगा । सन्त ने कहा, भई मैं तो बूढ़ा हूँ, गलती से पैर इसके ऊपर चला गया होगा, तुम इसे वहां रख दो जहाँ शिवलिंग नहीं है । नामदेव ने सोचा शिवलिंग बीच में है बगल में तो कुछ नहीं है । उसने जैसे ही पैर उठाकर वहाँ रखा, वहाँ एक शिवलिंग । जहाँ जहाँ उसने सन्त के पाँव को रखा वहाँ वहाँ शिवलिंग प्रकट हो गया । नामदेव भी कुछ तो समझदार था । भले ही कच्चा था पर भगवान के साथ रहता था, कुछ तो बुद्धि थी, तुरन्त समझ गया कि भगवान ने मुझे किसी कारण से, कुछ समझने के लिये यहाँ भेजा है।

और ये महात्मा जी कुछ तो भगवान से जुड़े होंगे तभी तो शिवलिंग पर पैर रख कर लेटे हैं। क्योंकि महात्मा ऐसा काम नहीं करते जिससे भक्त के दिल में गलतफहमी हो बल्कि वो तो "यद् यद आचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरोजनः" गीता में भगवान कहते हैं कि श्रेष्ठ लोग जैसा अपना जीवन बिताते हैं, मनुष्य वैसा ही आचरण करता है, उसकी ही नकल करता है। सन्त जन तो इस बात को जानते हैं, समझते हैं कि जैसे मैं जीता हूँ, जो मैं करता हूँ, भक्त जन, शिष्यगण उसी का अनुसरण करेगें। परन्तु इस समय नामदेव को बताना है, समझाना है कि तू यह सोचता है कि भगवान् तेरे पास रहता है और किसी के पास नहीं, शिवलिंग को मात्र शिवलिंग मानकर उनके पाँवों को यहा ंवहाँ हिलाता है,

शिवसूत्र कहता है, गुरुरूपाय- अपने प्रत्यक्ष अनुभव के लिए एक ही उपाय है कि हम किसी सद्गुरु की शरण में जायें ।

और देखता है कि शिवलिंग तो हर जगह है। हम एक रूप की पूजा करते हैं परन्तु जब यह ज्ञान हो जाता है कि वो तो सर्वत्र है, जैसा कहा है, "गुरुरेव जगत्सर्वं" । यह ठीक है कि हम शरीर को एक रूप मानते हैं और उसमें हम सद्गुरु का दर्शन करते हैं परन्तु हमारा ऐसा ज्ञान हो कि सर्वत्र उसी का ही स्वरूप है । नामदेव तुरन्त समझ गये, उन्होने सन्त विसोवा खेवर को साष्टांग नमस्कार किया और कहा आप मुझे समझाइए, बताइये । भगवान् के पास रहता तो हूँ परन्तु मुझे अन्य लोगों ने कच्चा कह दिया है, आप कृपा करके मुझे बताइये यानि पका दीजिये । क्योंकि हम पुस्तक पढ़ सकते हैं, शास्त्र की बातों को समझने का प्रयास कर सकते हैं, युनिवर्सिटी द्वारा डिग्री भी ले सकते हैं, परन्तु फिर भी समस्या रहती है कि उसे अपने प्रत्यक्ष अनुभव में कैसे लायें तो शिवसूत्र कहता है, गुरुरूपाय- उसके लिये एक ही उपाय है कि हम किसी सद्गुरु की शरण में जायें और उस माध्यम द्वारा उस ज्ञान को प्राप्त करें । हमारे यहां यह परम्परा चलती आई है । भगवान् ही सर्वप्रथम गुरु है जिन्होंने यह ज्ञान आगे बढ़ाया । उसके बाद सद्गुरुओं की भी परम्परा चलती रही, शिष्यों की भी परम्परा चलती आई है । जितने भी शास्त्र बने हैं उनमें यही है कि गुरु कुछ ज्ञान देता है, बताता है और शिष्य उनको समझता है, नहीं समझता है तो उस पर कुछ प्रश्न करता है । मेरे पास भी कुछ प्रश्न आयें हैं,

जब हम सद्गुरु के समक्ष, उसकी शरण में आ गये तो उससे बढ़कर कौन सा उचित समय है ?

प्रश्न भी ऐसा है कि निरन्तर चलता रहता है । अगर मैं कह दूँ 'गुरुरेव जगत्सर्वं' कि सब जगह गुरु है तो कोई न कोई आकर कहेगा कि मैं कैसे सब में गुरु देखूँ, कोई अच्छा है, कोई बुरा है, कोई ऐसा है कोई वैसा है । जब हम ऐसी दृष्टि रखेंगें कि कोई अच्छा है कोई बुरा है तब दर्शन होना असम्भव है । क्योंकि तब तो द्वैतभाव में फसें हुये हैं । हमें तो इन बातो को छोड़ देना है कि अच्छा है बुरा है, ऐसा है वैसा है । जैसा है, है । उससे हमें क्या लेना देना । हमें तो उसकी दिव्यता का दर्शन करना है । उसकी दिव्यता देखते हुये, उसके अन्तर में जो भगवान स्वरूप है, उसका हमें दर्शन करना है । हम हमेशा ही सोचते हैं विचार करते हैं कि जब भगवान कि इच्छा होगी तब मैं भगवान् का दर्शन करूँगा । हम हमेशा ही अपनी जिम्मेदारी दूसरों पर थोप देते है कि जब वो करेगा तब होगा । हम ज्योतिषी के पास भी जाते है कि जरा देखो मेरी कुण्डली में कब मेरा योग होगा । योग तो अभी है । इसी समय । बाबा जी से किसी ने एक बार पूछा कि आप के पास कई लोग आते हैं तो उनके लिये साधना शुरु करने का कौन सा उचित समय होगा तो बाबा जी ने कहा कि जिस समय वह मेरे पास आ गया वो सबसे उचित समय है यानि जब हम उस सद्गुरु के समक्ष, उसकी शरण में आ गये तो उससे बढ़कर कौन सा उचित समय है ? जब हम निश्चय कर यह निर्णय ले लेते हैं कि उनकी शरण जाकर उनकी कृपा को मुझे पाना है तो फिर उनके पास जाकर, उनकी शरण

जब हम सद्गुरु की शरण में आ जाते हैं तो हमारे पास भी स्वाभाविक रूप से सब कुछ आ जाता है ।

में रहकर उस ज्ञान को प्राप्त कर लेना हैं । जब धीरे,धीरे,धीरे सद्गुरु क्या है, वो कृपा क्या है, मुझे मेरे जीवन में क्या करना है, यह समझ आ जाता है, तब जो गुरुगीता में लिखा है कि जो कुछ भी है सब उसी का प्रसाद है, सब उसी की लीला है, इसको हम वास्तव में समझ लेते हैं. स्वीकार कर लेते हैं । जैसा तुकाराम महाराज कहते हैं कि हमारे अज्ञान को हटाने के लिये मात्र उसकी कृपा की आवश्यकता है, जब उसकी कृपा हो जाती है तब निश्चय हि हमारी त्रुटियां मिट जाती हैं । ज्ञानेश्वर महाराज अपने एक भजन में सद्गुरु की महिमा का वर्णन करते हैं, श्री गुरु सरिखा असतां पाठि रखा इतरांचा लेखा कोण करि । कि मेरे पीछे मेरे साथ सद्गुरु खड़े हैं, सद्गुरु मेरी देखभाल करते हैं तो मुझे कोई चिन्ता क्यों ? जब हमने सब कुछ उन पर छोड़ दिया है, समर्पण कर दिया है तो सब कुछ में सब कुछ आ जाता है , ऐसा नहीं की यह कर दिया पर यह नहीं किया । सब कुछ यानि सब कुछ । वह कहते हैं कि जब मैं उनकी शरण में हूँ तो वह मेरी रक्षा करते हैं । राजायांची कान्ता काय भीक मागे, मना चिये जोगे सिद्धि पावे - क्या राजा की पत्नी को भीख मांगनी पड़ती है, जब राजा के पास सब कुछ है तो स्वाभाविक रूप से रानी के पास भी सब कुछ है । सद्गुरु के पास सब कुछ है, जब हम सद्गुरु की शरण में आ जाते है तो हमारे पास भी स्वाभाविक रूप से सब कुछ आ जाता है क्योंकि मन से जैसे रानी राजा को अपना मानती है, वैसे ही हम भी सद्गुरु

गुरु महिमा, गुरु कृपा यह तो अनुभव की बातें हैं और अनुभव द्वारा ही हम उसे जान सकते हैं ।

को अपना मानते हैं । हमने अपना सब कुछ उनके ऊपर छोड़ दिया है । ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं ऐसी कोई वस्तु नही जो हम पा नही सकते। कल्पतरुतवती जो कौणी बैसला, काय म्हणे त्याला सांगी जोही- वे कहते है कि हम कल्पवृक्ष के नीचे बैठे है, जैसे कल्पवृक्ष के नीचे हम कोई भी याचना, प्रार्थना करते हैं वो पूर्ण होती है , वैसे ही जब सद्गुरु कृपा शरण के नीचे हम बैठे हैं तो वाणी द्वारा हम क्या बतलाये, क्या समझायें कि उससे क्या प्राप्त हो सकता है। सन्त जन कहते हैं कि ठीक है हम प्रयास करते हैं बतानें का, समझाने का, परन्तु वास्तव में गुरु महिमा, गुरु कृपा यह तो अनुभव की बातें हैं और अनुभव द्वारा ही हम उसे जान सकते हैं । ज्ञानदेव म्हणे तरलों तरलों आतां उद्धरलो गुरु कृपें - ज्ञानदेव महाराज कहते है मैं तो तर गया, इस संसार सागर से तो तर गया हूँ, उस सद्गुरु की कृपा से मेरा उद्धार हो गया है। श्री गुरु सरीखा असतां पाठिराखा इतरांचा लेखा कोण करीं । जब मेरी पीठ के पीछे सद्गुरु हैं, मुझ पर ऐसी कृपा है तो मुझे और किसी की चिन्ता क्यों जैसा ज्ञानेश्वर महाराज ने कहा, मैं तो तर गया मेरा तो उद्धार हो गया, तो ऐसे ही हम भी प्रार्थना करते हैं कि बिना किसी को कष्ट दुख दिये, बिना किसी को काटते हुये इस संसार सागर से तर जाऊँ । स्वामी रामतीर्थ कहते हैं कि हमारा जीवन ऐसा हो कि औरों कि त्रुटियाँ, औरों कि जो बातें हम देखते हैं उसकी बजाय दर्पण को अपने सामने रखें और अपने आप का ही दर्शन करें ।

अपने जीवन में जिस सन्त की कृपा हमने पायी है, जो मार्ग दर्शन उन्होंने हमें दिया है उसको हम अपने जीवन में ऐसे उतारें कि उस ज्ञान के सिवा हमारे जीवन में और कोई बात हो नहीं ।

किसी और को देखने की बजाय, औरों कि अच्छी बुरी बातों, गलतियों को देखने की बजाय हम उसको अपने अन्तर कि ओर करें । अपनी जीवन रेखा के बारे में चिन्ता करें । कभी आपने ज्योतिषी को हाथ दिखाया होगा । वो रेखाओं को देखते हैं और कहते है रेखा दो तीन जगह से टूटी हुई है । तो हम पूछते हैं कि क्या बात है ? कुछ नही कुछ नही । परन्तु! इसलिये हम कोशिश करते है कि अच्छी सीधी गहरी रेखा हो । तो स्वामी रामतीर्थ कहते हैं कि उस रेखा को बिना तोड़े, काटे अपनी रेखा को दृढ़ बनाओ यानि अपनी निष्ठा में हम दृढ़ हो जायें । अपने जीवन में जिस सन्त की कृपा हमने पायी है, जो मार्ग दर्शन उन्होंने हमें दिया है उसको हम अपने जीवन में ऐसे उतारें कि उस ज्ञान के सिवा हमारे जीवन में और कोई बात हो नहीं। जो कुछ भी है उसकी कृपा है । गुरुगीता में १८२ श्लोक हैं। उसमें से आप कोई भी श्लोक जो आपके समझ में आये उसे आप वहाँ पर लिख कर लगा लें जहाँ उसे आप रोज देख सकते हैं, पढ़ सकते हैं। विदेश में लोग फ्रिज पर वो बातें रख देते हैं जो वो सोचना चाहते हैं, याद करना चाहते हैं। खैर यहाँ तो पता नहीं वहाँ स्त्री पुरुष दोनो ही फ्रिज में जाकर जो जो लेना चाहते हैं और ले लेते हैं। और किसी कमरे में कभी जाते हैं या नही पर फ्रिज में से कभी जूस , कभी दूध लेने के लिये जब इच्छा होती है तब चले जाते हैं। वो सोचते हैं कि यहाँ जो मैंने लिखा है उसे मैं अवश्य पढ़ूँगा, देखूँगा । कोई कोई लोग जहाँ वे काम करते हैं वहाँ पर उस बात को लिख देते हैं जिसे वह याद रखना चाहते हैं ।

यदि हम आन्तरिक शान्ति पा सकें तो उससे बढ़कर और कुछ है ही नहीं ।

तो जहाँ भी आपको सुविधा हो शास्त्रों की जो भी बात आपको अच्छी लगे, उसको आप लिखकर रखें । कुछ लोग डायरी बना लेते हैं जिसमें कोई श्लोक पसन्द आ गया या कुछ बात जची, वह लिख लेते हैं। उस पर पुनः पुनः विचार करें, उसे दोहरायें और जैसे जैसे हम उस पर विचार करते जायेंगे वैसे वैसे वो बातें हमारे जीवन में उतरती जायेंगी। बहुत अच्छी बात है सब शान्ति से बैठ कर सत्संग का आनन्द लेते हैं । मैं मानता हूँ कि यदि हम आन्तरिक शान्ति पा सकें तो उससे बढ़कर और कुछ है ही नही । और जैसे वेदान्त कहता है कि सब शून्य के बराबर है , उसका कोई मूल्य नहीं ।३१६०० श्वास तो नहीं परन्तु कुछ अंश भी, १००० श्वास भी हमारे भगवत चिन्तन में, नाम जप में रोज गुजरें तो बहुत अच्छी बात है ।

सद्गुरुनाथ महाराज की जय

ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिं
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम् ।
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ॥

I bow to the Sadguru, who is the bliss of Brahman and the bestower of the highest joy. He is absolute. He is knowledge personified. He is beyond duality, all pervasive like the sky, and is the object of Thou art That.

He is One. He is eternal. He is pure. He is steady. He is the witness of all thoughts. He is beyond all modifications (of mind and body) and is free from the (influence of the) three guṇas.

– Guru Gītā, verse 89

SHANTI MANDIR
Temple of Peace